॥ श्रीस्वामिनारायणो विजयतेतराम् ॥

श्रीनरनारायणदेव नूतन मंदिर महोत्सव के

उपलक्ष्य में प्रकाशित

समाजसुधारक

भगवान श्रीस्वामिनारायण

प.पू.ध.धू. आचार्य श्रीकौशलेन्द्रप्रसादजी

महाराज की आज्ञा से

महंत सद्गुरु पुराणी स्वामी श्रीधर्मनंदनदासजी के

आशीर्वाद से

-: लेखक :-

डॉ. स्वामी सत्यप्रसाददासजी (वेदान्ताचार्य)

-: प्रकाशक :-

श्रीस्वामिनारायण मंदिर, भुज - कच्छ.

समाजसुधारक भगवान श्रीस्वामिनारायण

-: प्राप्ति स्थल :-

श्रीस्वामिनारायण मंदिर, श्रीनरनारायणदेव कोठार

श्रीस्वामिनारायण रोड, सीटी पोलिस स्टेशन के सामने

भुज - कच्छ. पीन. ३७०००१

द्वितीय आवृत्ति :-

प्रत :- ३०००

संवत् :- २०६६ कार्तिक सुद १५

दिनांङ्क :- ०२- ११ - २००९

-: मुल्य :- २०

टाइपींग एवं सेटींग

स्वामी पुरुषोत्तमप्रिय दासजी

श्रीनरनारायणदेव कोम्प्युटर - भुज मंदिर

-: मुद्रण :-

श्रीनरनारायण प्रिन्टींग प्रेस

श्रीस्वामिनारायण मंदिर - भुज-कच्छ.

-: दो शब्द :-

भगवान श्रीस्वामिनारायण ने तीस वर्ष के अल्प समय में गुजरात प्रान्त की काया बदल दी । सारे भारतवर्ष में शासन छिन्नभिन हो गया था । खासकर गुजरात में तो राजाओं स्वयं प्रजा को लूट रहे थे । धर्म, अहिंसा, सदाचार और नीति का नामोनिशान तक नहीं दिखाई दे रहा था । जोबनपगी जैसे कई डाकू और गुंडे लोग आम जनता को दिन में लूट रहे थे और चोर रात में । गुजरात की ऐसी परिस्थिति को देख कर भगवान श्रीस्वामिनारायण ने अपने कर्तव्य को गहनता से सोचकर राजा और जनता को धर्म, नीति, सदाचार और अहिंसा से सुधारने का प्रयत्न किया और पूर्णरूप से सफल भी हुए ।

इस प्रकार भगवान श्रीस्वामिनारायण ने वैदिक धर्म की स्थापना के साथ साथ जनता को आध्यात्मिक और व्यावहारिक नीति की शिक्षा दे कर इस लोक में और परलोक में सुखी होने का मार्ग बताया । कौन सा मार्ग था ? लोगों को कैसे और किस प्रकार सुखी बनाया ? इन प्रश्नों का संक्षिप्त विवरण सरल भाषा में इस छोटीसी पुस्तिका में देने का प्रयास किया हैं और भगवान श्रीस्वामिनारायण के मुख्य सामाजिक कार्य और संप्रदाय का संक्षिप्त परिचय दिया है । क्यों कि आज के तेजगति वाले (फास्ट) युग में लोगों को पढने का ज्यादा समय ही नहीं मिल

रहा है । इसलिए बडे बडे ग्रन्थों को पढने में असमर्थ हो रहे हैं । ऐसी स्थिति में छोटी पुस्तिका अति उपयोगी हो सकती है। मुझे आशा है कि यह छोटी-सी किताब देश विदेश में बसे हुए प्रिय वाचकों को खास कर युवाओं को अति प्रिय साबित होगी ।

भुज श्री स्वामिनारायण मंदिर के सद्‌गुरु संतोने इस लेखन कार्य में मुझें प्रेरणा देकर प्रवृत्त किया है । इसलिए मैं इन संतो का अति आभारी हुँ ।

इस प्रकार पुनः पुनः प्रेरणा मिलती रहे इस आशा के साथ प्रिय वाचकों को जयश्री स्वामिनारायण ।

स्वामी सत्यप्रसाद दासजी

(वेदान्ताचार्यः) भुज कच्छ

-: प्रस्तावना :-

भगवान श्रीस्वामिनारायण का जन्म छुपैया गाँव में ई. १७८१ अप्रैल ता. २ सोमवार के दिन हुआ था। उनके बचपन का नाम घनश्याम था। माता का नाम श्रीभक्तिदेवी और पिता का नाम श्रीधर्मदेव था।

असुरों के उपद्रव के कारण मातापिता छुपैया गाँव को छोडकर अयोध्या में रहने लगे। माता पिता के अक्षरधाम गमन के बाद केवल ग्यारह वर्ष की अवस्था में उन्होंने जीवो कीं रक्षा के लिए स्वजन और स्वगृह को छोडकर आसेतु हिमालय तक भारत की यात्रा करने निकल पडे। अब वे श्री नीलकंठवर्णी के नाम से प्रसिद्ध हुए। हिमालय, बिहार, मध्यप्रदेश, असाम, बर्मा, बंगाल, आंध्र, तमिलनाडु, केरल, कर्णाटक, महाराष्ट्र, गुजरात आदि संपूर्ण भारतवर्ष में अकेले और पैदल ही तीर्थाटन करते हुए उन्होंने सौराष्ट्र के लोज गाँव में पदार्पण किया। उस गाँव में श्रीकृष्ण के परम भक्तराज उद्धवावतार सद्गुरु श्रीरामानंद स्वामी अपने श्रीमुक्तानंद स्वामी आदि पचास शिष्यों के साथ रहते थे। मगर जब श्रीनीलकंठवर्णी मठ में आए उस समय श्रीरामानंद स्वामी भुजनगर (कच्छ) में विराजमान थे। श्रीनीलकंठवर्णी इस आश्रम में धर्म, ज्ञान, वैराग्य युक्त श्रीकृष्ण की भक्ति की पराकाष्ठा देख कर वहीं ठहरने का निश्चय किया। अठारह साल के युवा वर्णीराज की प्रतिभा, प्रभाव और क्रान्ति को देखकर श्रीमुक्तानंद स्वामी आदि पचास साधु लोग आश्चर्य

चकित हुए। वर्णीराज ने श्रीमुक्तानंद स्वामी के आगे सद्गुरुवर्य श्रीरामानंद स्वामी के दर्शन करने की इच्छा बताई। श्रीमुक्तानंद स्वामी ने आश्वासनदेते हुए कहा कि वे कुछ ही दिनों में अवश्य यहां पधारेगें। आप इधर ही आश्रम में रहकर इन की प्रतीक्षा करे। श्रीनीलकंठवर्णी ने श्रीमुक्तानंद स्वामी की बात पर विश्वास किया और आश्रम की विविध सेवा करते हुए श्री रामानंद स्वामी के आगमन की प्रतिक्षा करने लगे।

कुछ दिनों के बाद श्रीरामानंद स्वामी पिपलाना गाँव में आए। श्रीनीलकंठवर्णी, श्रीमुक्तानंद स्वामी आदि संतगण पिपलाणा गए और गुरुजी के दर्शन पाकर धन्य हुए। सद्गुरु श्रीरामानंद स्वामी ने श्रीनीलकंठवर्णी को देखकर ही पहचान लिया। यह तो साक्षात् श्रीकृष्ण भगवान का अवतार है। अब मेरे अवतार का प्रयोजन पूरा हो गया। बाद में लोक कल्याण के लिए संप्रदाय की परंपरा के अनुरुप इन्होने श्रीनीलकंठवर्णी को यथाशास्त्र भागवती दीक्षा प्रदान करके श्रीसहजानंद स्वामी और श्रीनारायणमुनि एवं दो नाम रखे। कुछ दिनों के बाद अठारह साल के, ये तेजस्वी ब्रह्मचारी श्रीसहजानंद स्वामी को उद्धव संप्रदाय की धर्मधुरा सौंप कर, वे स्वयं स्वधाम चल बसे। बाद में श्रीसहजानंद स्वामी ने स्वकर्तव्य विषय के बारे में गहन विचार दोहराया।

श्रीसहजानंद स्वामी को भक्तलोग भगवान श्रीस्वामि-नारायण के रूप में क्यों पूजने लगे ? इस विषय में जानना चाहते हैं तो आपको श्रीसहजानंद स्वामी के युगमें भारतवर्ष की

स्थिति कैसी थी ? इस समय उन्होंने क्या किया ? किस प्रकार उन्होंने समाज में क्रान्ति की ? कैसे कैसे लोंगों को नया जीवन दिया ? यह सब अवश्य जानना चाहिए। इनके युग में भारतदेशमें कैसी परिस्थिति थी ? खासकर गुजरात राज्य की परिस्थिति कैसी थी ? उसका थोडासा अवलोकन करें।

मुगल साम्राज्य के पतन के बाद महाराष्ट्र साम्राज्य भी धीरे धीरे क्षीण होने लगा, अंत में पाणिपत् क्षेत्र में चौथा युद्ध खेला गया। इस युद्ध में अंग्रेजोने महाराष्ट्र साम्राज्य को पूरी तरह पराजित किया। इसके बाद भारतदेश का अधिकांश भाग अंग्रेजोने अपने कब्जे में कर लिया। तथापि संपूर्ण भारतदेश पर अंग्रेजों का शासन नहीं हुआ था। कई ऐसे राज्य भी थे जहाँ सामन्त राजा स्वयं अपने आपको स्वतंत्र और निरंकुश मानते थे और जनता को दुःखी कर रहें थें एवं लूंट रहे थे। आपत्ति के समय भी रक्षण नहीं कर रहें थें। ऐसे राज्य में कानून व्यवस्था बिलकुल टूँट गई थी। राज्य में सर्वत्र अराजकता फैली दुई थी। जनता भय ग्रस्त थी चारों ओर अंधाधुंध मच गई थी। ऐसी स्थिति में भगवान श्रीस्वामिनारायण पांचसौ परमहंसों और हजारों भक्तों की एक धर्म सेना तैयार कर के जन जागरण केलिए निकल पडे।

भगवान श्रीस्वामिनरायण के साथे पाँचसौ (५००) परमहंस थें। गुजरात प्रदेश में कई प्रजा रक्षक राजा प्रजा भक्षक हो गए थे। आम जनता की एसी परिस्थिति को देखते हुए जन कल्याण के लिए भगवान श्रीस्वामिनारायण उन परमहंसों के

साथ गाँव गाँव पर्यटन करने लगे। और जनता में सौहार्द, सौजन्य, मतऐक्य, धर्म, नीति, सत्य, अहिंसा आदि का बोध के साथ साथ लोगों का अत्यन्त आवश्यक वापी, कूप और तालाब आदि का भी निर्माण किया। स्वयं लोगों के साथ जुड कर काम करते हुए जनता को प्रोत्साहित किया। इस कार्य से जनता ही बहुत प्रभावित और धर्मपरायण बनने लगी। राजा भी भगवान श्रीस्वामिनारायण के प्रभाव से प्रभावित हो कर स्वयमेव कर्तव्य परायण बनने लगे। चोर, डाकू, लूटेरों ने अपनी कुटिलता को छोडकर भगवान श्रीस्वामिनारायण के आश्रित हुए। अंग्रेज कंपनी के शासक भी भगवान श्रीस्वामिनारायण के कार्य की सराहना करने लगे। इस प्रकार फिर एक बार शासन धर्म, नीति, और सत्यमय हुआ। इस से राज्य में सर्वत्र सुख, शान्ति और निर्भयता फैलने लगी।

भगवान श्रीस्वामिनारायण के सोदाहरण सप्रमाण युक्त इस समाजसुधारक कार्य को संक्षेप में आम जनता को ज्ञापन के लिए भुज मंदिर के **स्वामी सत्यप्रसाद दासजी** ने लिखा है। इस से मैं बहुत प्रसन्न हुआ हुँ। यह छोटी सी किताब जनता को भगवान श्रीस्वामिनारायण के पवित्र, परोपकारी और प्रेरणादायक जीवन के बारे में जानने में बहुत उपयोगी होगी।

पण्डितरत्नः के. एस. वरदाचार्यः
(षड्दर्शनाचार्यः नव्यन्यायाचार्यः,
सांख्ययोगवेदान्तमीमांसातीर्थः)
मैसुर (कर्णाटक)

अनुक्रमणिका

१	श्रीस्वामिनारायण भगवान का अवतार प्रयोजन	११
२	श्रीरामानंद स्वामी का जन्म और संप्रदायकी स्थापना	१३
३	श्रीघनश्याम महाराज का जन्म	१४
४	गुहत्याग और भारत भ्रमण	१५
५	सद्गुरु श्रीरामानंद स्वामी से मिलाप	१६
६	भक्तों के लिए दों वरदान	१८
७	समाधि प्रकरण द्वारा एकेश्वर ज्ञान का प्रचार	१८
८	सामाजिक विविध कार्य सदाव्रत (अन्नक्षेत्र)	१९
९	ग्रामीण विकास	२०
१०	कारियाणी में तालाव का निर्माण	२१
११	समाज के पिछड़े वर्ग का उद्धार	२१
१२	व्यसनों से मुक्ति	२२
१३	मनुष्यों में शक्ति परिवर्तन	२३
१४	जोबनपगी	२६
१५	धार्मिक कार्य	२८
१६	परमहंसवृंद और साहित्य में योगदान	२९
१७	भुज में हिंसामय यज्ञ का विरोध	३१
१८	अहिंसा एवं वैदिक यज्ञों का प्रवर्तन	३३

१९	जेतलपुर से अहिंसामय यज्ञ प्रारंभ	३४
२०	कुरिवाजों	३५
२१	सती प्रथा	३५
२२	बालहत्या	३६
२३	वेद का संदेश	३७
२४	धर्म मर्यादा	३८
२५	विशिष्टाद्वैतसिद्धान्त	३९
२६	तत्त्वनिर्णय	४०
२७	चित् (जीवात्मा)	४१
२८	अचित् (माया - जगत्-प्रकृति)	४२
२९	ईश्वर	४३
३०	भगवान श्रीस्वामिनारायण का शिक्षापत्री संदेश	४५
३१	अंग्रेजों से मिलाप	४६
३२	भागवतधर्म का पुनः उत्थान	४७
३३	साहित्य	४९
३४	भगवान श्रीस्वामिनारायण द्वारा प्रतिष्ठापित मुख्य मंदिर तथा देव	५२
३५	आचार्य स्थापन	५३
३६	अन्तर्धान	५३

॥ श्रीस्वमिनारायणो विजयतेतराम् ॥

श्रीस्वामिनारायण भगवान का अवतार प्रयोजन

प्रात:काल का समय था । श्रीनरनारायण ऋषि बदरिकाश्रम में बदरिवृक्ष के नीचे एक सुंदर वेदिका पर ध्यानावस्था में विराजमान थे । ऐसे में भारतवर्ष की यात्रा करके धर्म और मूर्ति सहित उद्धव, गौतम, गर्ग, मैत्रेय. पिप्पलाद, बृहस्पति, याज्ञवल्य, विश्वामित्र आदि ऋषिगण बदरिकाश्रम में आए और श्रीनरनारायण ऋषि को नमस्कार करके सामने बैठें। श्रीनरनारायण ऋषि ध्यान से जागृत हुए और ऋषिगण को नमस्कार करके स्वागत किया और आने का कारण पूछा ।

ऋषिगण ने दयनीय स्वर में कारण बताया- हे मुनिवर्य! हम भारतवर्ष की यात्रा करके आए हैं । भारत वर्ष में सर्वत्र अधर्म छाया हुआ है । धर्मगुरु धर्म के नाम से मनुष्यों को लूट रहे हैं । प्रजारक्षक राजा प्रजाभक्षक बन गए हैं । इस प्रकार पूरे भारतवर्ष में अधर्म का राज फैल गया है । भगवान के भक्तों को असुर बहुत दु:ख दे रहे हैं ।

ऋषिगण के संदेश सुनकर श्रीनरनारायण ऋषि ने धर्मसंस्थापन एवं अधर्म को उखाड कर फैंकने के लिए और साधुपुरुषों के रक्षण के लिए भारतवर्ष में अवतार धारण करने का मनोमन संकल्प किया और ऋषिओं को आश्वासन देने लगे । उसी वक्त श्रीनरनारायण ऋषि की इच्छा से दुर्वासा ऋषि उस सभा में आए, परन्तु सभी ऋषिगण श्रीनरनारायण ऋषि का दर्शन और अमृतवाणी सुनने में मग्न थे । इसलिए दुर्वासा ऋषि की ओर किसी का भी ध्यान नहीं गया । दुर्वासा ऋषि थोडी देर तक खडे रहें । बाद में क्रोधावेश में आकर गर्जना की - हे अभिमानी ऋषियों ! आपने मेरे जैसे महर्षि का सम्मान न करके मेरा बड़ा अपमान किया है । इसलिए मैं आप सब को शाप जेता हूँ कि आप सब मृत्युलोक में मनुष्य के रूप में अवतार धारण करेंगे और असुरों द्वारा दु:ख पाएँगे । एकाएक दुर्वासा मुनि के एसे वचन सुनकर सभी ऋषिगण भयभीत हो गए । श्रीनरनारायण ऋषि ने सभी ऋषियों को आश्वासन देते हुए कहा कि आपलोग चिन्ता मत कीजिए । हमें भी ऋषि का शाप लगा है । इसलिए हम भी आप लोगों के साथ भारतवर्ष में अवतार धारण करेंगे । धर्म की स्थापना एवं भक्तो की रक्षा करेंगे । इस प्रकार भगवान ने पृथ्वी पर अवतार धारण करने का निमित्त बनाकर श्रीस्वामिनारायणरूप में धर्म और भक्ति के पुत्र बन कर जन्म धारण करने का निश्चय किया ।

श्रीरामानंद स्वामी का जन्म और संप्रदाय की स्थापना

उद्धव (श्रीस्वामिनारायण) संप्रदाय की स्थापना आज से करीब दो सौ पचास वर्ष पूर्व हुई। उद्धवावतार श्रीरामानंद स्वामी इस उद्धव (श्रीस्वामिनारायण) संप्रदाय के आद्यस्थापक थे। उनका जन्म सं १७९५ श्रावण वदी अष्टमी के दिन अयोध्यानगरी में हुआ था।

उनकी माता सुमतिदेवी और पिता अजयदेव थे। वे काश्यपगोत्रोद्भव आश्वलयनशाखीय अजयदेव ऋग्वेदी विद्वान् ब्राह्मण थे। वे बचपन में ही विद्याभ्यास के बहाने गृहत्याग करके भारतवर्ष में विचरण करते हुए तमिलनाडु में वैष्णवों के परमधाम श्रीरंगक्षेत्र में पहुँचे। जहाँ श्रीरंग भगवान के सांनिध्य में रह कर श्रीरामानुजाचार्य को आध्यात्मिक गुरु के रूप में मनोमन स्वीकार किया और उनके साक्षात् दर्शन पाने के लिए तप करने लगे। तप से प्रसन्न होकर श्रीरामानुजाचार्य ने श्रीरामानंद स्वामी को स्वप्न में अपने दिव्य दर्शन दे कर उनको पञ्चसंस्कार युक्त भागवती दीक्षा दे कर श्रीकृष्णभगवान की भक्ति का प्रचार करने का आदेश दिया। बाद में श्रीरामानुजाचार्य की दिव्य प्रेरणा से धर्म प्रचार के लिए निकल पडे। विचरण करते हुए वे वृन्दावन में पहुँचे। वहाँ उन

को भगवान श्रीकृष्ण का साक्षात्कार हुआ और मन्त्रद्वय प्राप्त हुए। बाद में धर्म, ज्ञान, वैराग्य युक्त श्रीकृष्ण भगवान की भक्ति सहित भागवतधर्म के प्रचार के लिए गुजरात में आए और श्रीसंप्रदाय को नूतन रूप दिया। उद्धवावतार सद्गुरु श्रीरामानंद स्वामी द्वारा इस संप्रदाय की स्थापना होने पर इस संप्रदाय को **'उद्धव संप्रदाय'** नाम से माना गया। बाद में भगवान श्रीस्वामिनारायण ने संप्रदाय का विशेष विकास किया। इसलिए यह संप्रदाय श्रीस्वामिनारायण संप्रदाय के नाम से भी जाना जाता है। **''यदा यदा ही धर्मस्य''** इत्यादि अपने वचनों के अनुसार इस विषमकाल में साक्षात् श्रीनारायणने स्वयं श्रीसहजानंद स्वामी के रूप में अवतार धारण किया। अतः एव श्रीसहजानंदजी सब के स्वामी होने से श्रीस्वामिनारायण भगवान के नाम से प्रसिद्ध हुए। वे समय और गुणों के अनुसार घनश्याम, हरि, हरिकृष्ण, नीलकण्ठवर्णी, सहजानंद स्वामी, नारायण मुनि आदि कई अन्य नाम से भी प्रसिद्ध हुए।

-: श्रीघनश्याम महाराज का जन्म :-

भगवान श्रीस्वामिनारायण का जन्म वि. संवत् १८३७ चैत्रशुक्ल रामनवमी (ईस. १७८१,२ अप्रैल) के दिन उत्तर

प्रदेश में अयोध्यानगरी से २४ माईल दूर छपैया गाँव मे हुआ था। उनके पिता सावर्णिगोत्रोत्पन्न श्रीधर्मदेव सामवेदी विद्वान् ब्राह्मण थे और माता का नाम श्रीभक्तिदेवी था । श्रीस्वामिनारायण भगवान का बचपन का नाम श्रीघनश्याम था। उनके दो भाई थे बडे श्रीरामप्रताप और छोटे श्रीइच्छाराम।

असुरों के उपद्रव के कारण धर्म और भक्ति अपने पुत्रों के साथ छपैया छोड़कर अयोध्यानगरी में रहेने लगे। बाल्यावस्था में ही घनश्याम ने अपने दिव्य प्रभाव से कई असुरों का पराभव किया। तीन साल की बाल्यावस्था में ही अपने विद्वान् पिता धर्मदेव के पास सभी शास्त्रों का अध्ययन किया। कई बार विद्यानगरी काशी में बड़े बड़े विद्वानों की सभा में शास्त्रार्थ करके विद्वानों को भी आश्चर्य चकित किया था।

-: गुहत्याग और भारत भ्रमण :-

भारतवर्ष में अनेक मुमुक्षु जीवों के उद्धार एवं समाज को सच्ची राह बताने के उद्देश्य से माता पिता के अक्षरधाम गमन के बाद केवल ग्यारह वर्ष की अवस्था में वि. सं. १८४९ आषाढ सुद १० शुक्रवार (ईसं. २९-६-१७९२) के दिन भगवान श्रीस्वामिनारायण ने धनधान्यपूर्ण अपने समृद्ध गृह का त्याग किया। अब वह श्रीनीलकंठवर्णी नाम से प्रसिद्ध हुए। इतनी

छोटी अवस्था में पैदल वनविचरण करते हुए हिमालय में अनेक साधकों को अपना दिव्य दर्शन देते हुए नेपाल देश में हिमालय की गण्डकी नदीतीर पर स्थित मुक्तिनाथ क्षेत्र में पहुँचे। भरत राजा ने जहाँ तप किया था, वहाँ चार मास तक कठिन तपस्या करके श्रीसूर्यनारायण देव की प्रसन्नता प्राप्त की और उन का आशीर्वाद पाकर वहाँ से बिहार, मध्यप्रदेश, असाम, बंगाल, आंध्र, तमिलनाडु, केरल, कर्णाटक, महाराष्ट्र, गुजरात आदि समग्र भारतवर्ष के कई प्रान्तों में बडे बडे अनेक राजाओं और अनेक आश्रमों में कई सन्यासीओं से मिले। सात साल और एक मास ग्यारह दिन तक अकेले ही पैदल तीर्थाटन करते हुए उन्होंने वि. संवत् १८५६ श्रावण वद ६ गुरुवार (ई स. २१-८-१७९९) के दिन सुबह सौराष्ट्र (गुजरात) में लोज गाँव में पदार्पण किया।

-: सद्गुरु श्रीरामानंद स्वामी से मिलाप :-

सौराष्ट्र के लोज गाँव में उद्धवावतार सद्गुरु श्रीरामानंद स्वामी का मुख्य और बडा आश्रम था। उस आश्रम में सद्गुरु श्रीरामानंद स्वामी की भागवती दीक्षा से दीक्षित विद्वान् श्रीमुक्तानंद स्वामी आदि पचास से अधिक संत रहेते थें। भगवान श्रीस्वामिनारायण अपनी भारतवर्ष की यात्रा पूरी

करते हुए इस आश्राम में श्रीमुक्तानंद स्वामी से मिले। इसी ही आश्रम में धर्म, ज्ञान, वैराग्य, भक्ति की पराकाष्ठा देख्र कर आश्रम में ठ़हरने का निश्चय किया। कुछ ही दिनो में सद्गुरु श्रीरामानंद स्वामी कच्छ आदि देशों में सत्संग प्रचार करके पिपलाणा गाँव में आए वहाँ भगवान श्रीस्वामिनारायण का सद्गुरु श्रीरामानंद स्वामी से मिलाप हुआ। सद्गुरु श्रीरामानंद स्वामी बहुत समय से यह घोषणा कर ही रहे थे कि हम तो केवल सुत्रधार हैं प्रधान नायक तो अभी आनेवाले हैं। भगवान श्रीस्वामिनारायण से मिलने के बाद इन्होंने कहा कि अब प्रधान नायक आ पहुंचे हैं और अब हमारा कर्तव्य पूर्ण हुआ है। इस प्रकार की घोषणा के बाद कुछ मास श्रीरामानंद स्वामी ने भगवान श्रीस्वामिनारायण को अपने साथ रख्रा। बाद में भगवान श्रीस्वामिनारायण को वि. सं. १८५७ कार्तिक सुद ११ बुधवार (ई.स. २८-१०-१८००) के दिन यथाशास्त्र भागवती दीक्षा देकर उनके **श्रीसहजानंद स्वामी और नारायण मुनि** ऐसे दो नाम रखें। कुछ दिनों के बाद श्रीरामानंद स्वामी ने १८ साल के इस तेजस्वी ब्रह्मचारी श्रीसहजानंद स्वामी को उद्धव संप्रदाय की धर्मधुरा वि. संवत् १८५८ कार्तिक सुद ११ सोमवार (ई.स. १६-११-१८०१) के दिन सौंप वे स्वयं वि. स. १८५८ मा. सुद १३ गुरुवार, (ई.सं. १६-१२-१८०१) के दिन परमधाम सीधार गये।

-: भक्तों के लिए दो वरदान :-

सद्गुरु श्रीरामानंद स्वामी ने भगवान श्रीस्वामिनारायण के सामने जब अपनी धर्मधुरा स्वीकार करने का प्रस्ताव रख्रा, तब उन्होंने गुरु से प्रार्थना करते हुए कहा कि आपके भक्तों के सुख्र के लिए वरदान देने की कृपा करें। तब सद्गुरु श्रीरामानंद स्वामीने प्रसन्न होकर अपने मनवांछित वरदान माँग ने को कहा। सहजानंद स्वामीने अपने गुरु से दो वरदान माँग लिये, जो आज भी संप्रदाय के भागवतों में प्रत्यक्षरूप में दिख्राई देतें हैं। जो संप्रदाय के सत्संगी हैं वे कभी भी अन्न एवं वस्त्रों से दुःख्री नहीं मिलेंगे। ये हैं- (१) **आपके भक्तों को प्रारब्धवश होनेवाला दुःख्र मैं ख्रुद सहन करुं अर्थात् वे सुख्री रहें।** (२) **आपके भक्तों का अन्न वस्त्रादि क दारिद्र्यका दुःख्र मुझें मिले, अर्थात् वे सुख्र की प्राप्ति करें। यह करुणा का भाव है।** वे ही महान् हैं जो दूसरों को सुख्री देख्रकर सुख्री रहतें हैं और दूसरे को दुःख्री देख्र कर दुःख्री हो जाते हैं।

-: समाधि प्रकरण द्वारा एकेश्वर ज्ञान का प्रचार :-

उस समय में चारों ओर लोग परस्पर ईश्वर के नाम पर झ्रगड़ रहे थे। भगवान श्रीस्वामिनारायण ने एक ऐसा आश्चर्यमय एवं अलौकिक प्रभाव बताया कि उन्के दर्शनमात्र से मनुष्यों

को बिना अष्टाङ्गयोग साधे समाधि लग जाती थी। समाधि में वे लोग भगवान श्रीस्वामिनारायण को अपने अपने इष्टदेव के स्वरूप में दर्शन करते थे। समाधि में इस आश्चर्यजनक अनुभव से वे लोग भगवान श्रीस्वामिनारायण के शिष्य बन कर उनको अपने अपने इष्टदेव के स्वरूप में भजने लगे। कई विद्वान लोग इस समाधि प्रकरण को मिथ्या दंभ मानकर भगवान श्रीस्वामिनारायण का दुष्प्रचार भी करने लगे। परन्तु समाधिस्थ मनुष्यों के शरीरों की परीक्षा और अनपढ़ ग्रामीण लोगों के सुख से ब्रह्मज्ञान का यथा शास्त्र वर्णन सुनने के बाद वे स्वयं भी सत्य का अनुभव करते हुए श्रीहरि के आश्रित बने। इस प्रकार अलौकिक प्रताप से एवं अपने इष्टदेव के स्वरूप में देख कर भगवान श्रीस्वामिनारायण को सब लोग अनेकेश्वर विवाद को छोड़ कर एकेश्वर के रूप में साक्षात् श्री नारायण का अवतार मानकर पूजने लगे।

-: सामाजिक विविध कार्य :-
सदाव्रत (अन्नक्षेत्र)

भगवान श्रीस्वामिनारायण का सिद्धान्त था कि - जबतक इस संसार में जिन लोगों को खाने के लिए कम से कम दिन में एकबार भी रोटी नहीं मिल रही है वे कभी आध्यात्मिकता के बारे में सोच भी नहीं सकते। इस सिद्धान्त

को प्राधान्य देकर चरितार्थ करने के लिए इन्हों ने मेघपुर, लोज आदि क्षेत्रों सदाव्रत चालु किये। एक के बाद एक करके सारे गुजरात राज्य में करीब एक सो से अधिक अन्नक्षेत्र चालु किए गए। किसी भी जाति के अन्नार्थी अन्नक्षेत्र से अन्नदान प्राप्त कर सकते थे। समाज में जातिवाद का जो तनाव था उसको अन्नदान के माध्यम से मिटाने का प्रयास किया और अन्नदान सबसे बडा दान है ऐसा चरितार्थ किया। आज भी इस संप्रदाय के सभी मंदिरों में अन्नदान क्षेत्र चालु हैं।

-: ग्रामीण विकास :-

सौराष्ट्र, कच्छ, काठीयावाड आदि छोटे-बड़े राज्यों में राजाओं की विलासप्रियता, निष्क्रियता एवं शोषणखोरी के कारण अनेक गाँवों में पीने के पानी जैसी व्यवस्था भी राजाओं ने नहीं करवाई थी। भगवान श्रीस्वामिनारायण ने गाँवो गाँव में विचरण करके देखा कि गाँव में लोगों को पीने के लिए पानी की व्यवस्था भी नहीं है और जिन जिन गाँवों में पीने के लिए पानी की कोई व्यवस्था नहीं थी, वहाँ स्वयं अपने साधुओं तथा भक्तों के साथ जाकर वापी, कूप, तालाब आदि का निर्माण करवा कर लोगों एवं गाय, बैंल आदि पशुओं केलिए भी पीने के पानी की सुविधायें उपलब्ध करवाई।

-: कारियाणी में तालाव का निर्माण :-

भगवान श्रीस्वामिनारायण कारीयाणी गाँव में पधारे हुए थे। उस समय बहुत सारे भक्त भगवान के दर्शन के लिए आये थे। उन्होंने देखा कि इस गाँव में पानी की बड़ी समस्या है। यदि गाँव के पास एक तालाब बनाया जाय तो सदा के लिए पानी की समस्या का हल हो जाए। उन्होंने संतो ओर भक्तों को बुलाया और तालाब खोदने का काम शुरु करवाया। पंद्रह दिनोंमें एक विशाल तालाब बन भी गया। वर्षाकाल में तालाब पानी से पूरा भर गया। इस प्रकार कारियाणी में पानी संकट दूर किया।

इस तरह मांगरोल आदि कई गाँवों में वापी, कूप, तालाब आदि का निर्माण किया और पानी की सुविधाएँ लोगों तक उपलब्ध करवाई।

-: समाज के पिछडे वर्ग का उद्धार :-

समाज में पिछडे वर्ग के लोग छुआछूत, व्यसन एवं वहम में फँसे हुए थे।

गुजरात के काठी, कोली, शुद्र, मुस्लिम, आहिर एवं अनपढ़ ग्रामीण किसान आदि के जीवन में नैतिकता और धार्मिकता का कोई नाम निशान भी नहीं था। इन लोगों के

जीवन में आहार, विहार एवं विचार परिवर्तन से एवं छुआछूत के समाधान से शुद्ध बनाने में और आगे लाने में भगवान श्रीस्वामिनारायण ने महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की। आज भी पूरे संप्रदाय में सत्संग का प्रभाव भगवान श्रीस्वामिनारायण के आश्रितों में सबसे बडा वर्ग इन लोगों का है। जो आज आहार एवं आचार विचार से परिशुद्ध है।

-: व्यसनों से मुक्ति :-

भगवान श्रीस्वामिनारायण ने गुजरात में प्रवेश किया तब यहाँ की परिस्थिति को व्यसनों ने बहुत ही अस्त व्यस्त कर दिया था। व्यसनों ने राजा और रंक पर अपना साम्राज्य फैला दिया था। भगवान श्रीस्वामिनारायण ने सोचा, कि समाज में जब तक व्यसनों का जैसे कि - मद्य, मांस, तमाकु, अफीम आदि का साम्राज्य फैला रहेगा तब तक समाज की उन्नति नहीं हो सकती। व्यसनों के जाल में जो इन्सान फँस जाता है, वह कभी भी सुखी नहीं हो सकता। व्यसनों की वजह से राजा अपने कर्तव्य को भूल गए थें। राज्यों में व्यसनों के कारण लूटेरों की संख्या काफी बढ़ गई थी। चारों ओर लूट मच गई थी। आमजनता, चोर और डाकूओं के भय से त्रस्त थी। राजाओं और जनता की बुरी परिस्थिति देखकर भगवान श्रीस्वामिनारायण ने स्वयं अपने संतो और भक्तों के साथ

अनेक गाँव में लाखों लोगों को निर्व्यसनी बनाकर समाज में एक नई क्रान्ति फैला दी। समाज में सर्वानुभूत एक चमत्कार फैल गया- कि जीवन में अन्न, धन, और वस्त्रों से सुखी बनना चाहें तो भगवान श्रीस्वामिनारायण के आश्रित बनें और कई व्यसनों से मुक्त हो जाएं। कुसंगी व्यसनों में जितना पैसा बरबाद करता है, यदि वह सत्संगी बन जाय तो व्यसनों की बरबादी से बचे और उन पैसों से अपने सारे परिवार को सुखी बना सकता है। इतना ही नहीं किन्तु विविध प्रकार के रोगों से भी बच सकता है। इसलिए श्रीस्वामिनारायण संप्रदाय में एक कहावत प्रचलित हो गई और आज भी इस की सत्यता दिखाई दे रही है। **कुसंगी के फेलफतुर में सत्संगी की रोटी।** अर्थात् कुसंगी मदिरा, गांजा, तमाकु, बीडी, सिगरेट, चरस आदि में जितना पैसा बरबाद करता है, यदि वह सत्संगी बन जाय तो इतना पैसा व्यसन मुक्त हो कर बचाया जा सकता है। भगवान श्रीस्वामिनारायण द्वारा चलाये गये इस व्यसनमुक्ति आंदोलन को आज भी संप्रदाय में प्राथमिकता दी जा रही है।

-: मनुष्यों में शक्ति परिवर्तन :-

हरएक प्राणी में शक्ति इस भगवान की देन है। यदि शक्ति का सही उपयोग किया जाय तो हर एक मनुष्य को स्वर्ग ले जा सकती है। सत्य की उपलब्धि हो सकती है। अगर उस

शक्ति का उपयोग सर्जनात्माक न हो तो वही शक्ति मानव का संहार करेगी, जीवन अस्त व्यस्त कर देगी और वही शक्ति नरक में डाल सकती है। ज्यादातर इस दूनिया में अशक्त लोग इतना पाप नहीं करते जितना शक्तिशाली लोग करते हैं। वे अपनी शक्ति के सामने पाप या बुरे काम करने में मजबुर हो जाते हैं, क्योंकि शक्ति का सदुपयोग करने का उसे पता भी नहीं हैं। इसलिए वे दूसरे को मारने में, लूटने में और दुःख देने में अपनी शक्ति का दुरोपयोग करते हैं। इसलिए इस दुनियामें जितने बड़े बड़े अपराधी हैं, पापी हैं उन सभी में महान शक्ति का स्रोत है। अगर उन्हें किसी महान पुरुष का एक क्षणभरका भी सत्संग हो जाय तो इनकी सारी शक्तियाँ अद्‌भूत रुप से बदल जाएगी। और वे क्षणभर में बडे धार्मिक हो जाएँगें। धार्मिक इतिहास में ऐसे सेकडों उदाहरण हैं- जहाँ पापी क्षणभर में पुण्यात्मा बन गए हैं। इसका मूल कारण सिर्फ इतना ही हैं- कि उनके पास शक्तियाँ बहुत थीं लेकिन उसमें परिवर्तन की जरुरत थी। नारदमुनि, बुद्ध भगवान जैसे परिवर्तन कराने वाले का क्षणभर समागम हो गया तो लूटेरे और भील जैसे आत्मा वाल्मिकि ऋषि बन गये। अंगुलीमाल भिक्षुक हौ गए। श्रीसहजानंद स्वामी के काल में कई राजाओं और आसुरी वृत्ति वाले लोगों ने अपनी शक्ति को विनाशकारी शक्ति के रुप में फैला कर समाज में हाहाकार मचा रखा था,

जिनके नाम मात्र से जनता थर-थर काँप रही थी। जोबनपगी जैसे अनेक चोर डाकूओं एवं वासुखाचर जैसे राजाओं में छिपी हुई आसुरी वृत्तियों को भगवान श्रीस्वामिनारायण ने अपने दिव्य प्रभाव से हृदय परिवर्तन करके उन असुरों को मानव बनाने का महान कार्य किया। उन के जीवन में एक अलौकिक परिवर्तन आया। जिन हाथों में निर्दोष जनता को लूंटने और मारने के लिए तलवारें, भाले एवं बर्छियाँ घुमती थीं उन्हीं हाथों में भगवान के नामकी माला फिरने लगी। जिन के मुख से अपशब्दों (गालियाँ) के अलावा कुछ निकलता नहीं था, उन के ही मुख से सत्यवाणी एवं भगवान के नाम गुंजने लगे। जिनके लिए मानवजीवन एक सूखे काष्ठ के समान था, और कोई मूल्य नहीं था, वही सभी प्राणीयों को नमस्कार करने लगें। इस प्रकार भगवान श्रीस्वामिनारायण ने असुरों में ही नहीं, बल्कि उनकी आसुरी वृत्तियों में भी परिवर्तन ला दिया। कई आसुरी आत्माओं को सच्चा मानव बनानेमें भगवान श्रीस्वामिनारायण का प्रमुख कार्य एवं दिव्य चमत्कार रहा है। इन चोर डाकू एवं राजाओं का उपद्रव शांत होने पर समाज में एक अभूतपूर्व शांति की अनुभूति हुई। ऐसी दिव्य घटनाओं से भगवान श्रीस्वामिनारायण के प्रति लोगों का अनुराग और बढ़ गया। लाखों लोग अनुयायी बने और अल्प काल में ही यह संप्रदाय सारे गुजरात प्रदेश में एवं

महाराष्ट्र आदि कई प्रदेशों में फैल गया। आज भगवान श्रीस्वामिनारायण का दिव्य प्रभाव समाज में सर्वत्र दिखाई देता है और यह संप्रदाय देश परदेश में दूर-दूर तक फैला हुआ है।

-: जोबनपगी :-

गुजरात में काठी, कोली, पगी, जैसी जातियाँ चोरी, लूट, निर्दोष की हत्या करने में प्रसिद्ध थीं। इन लोगोंकी नजरमें इन्सान की हत्या करनेमें या घासका तृण काटनेमें कोई फर्क नहीं था। उस समय में वडताल में जोबनपगी नामका एक डाकूराज था। जैसे ख़बर मिलती थी कि जोबनपगी आ रहा है, सब लोग तुरन्त ही अपने घरके दरवाजें बन्ध करके अंदर छिप जाते थे, या अपना प्राण बचाने के लिए गाँव छोड़ कर भाग जाते थे। जिन रास्तों से वह गुजरता था वह रास्ता निर्जन हो जाता था। ख़ुद बडौदा के महाराज गायकवाड भी उससे डरते थे और उन्हों ने जोबनपगी को पकड़ने के लिए सैनिक की बडी फौज तैयार की थी। लेकिन जोबनपगी को पकड नहीं पाए थे। जोबनपगी का नाम सुनकर सारे राज्य में लोगों की छाती काँप जाती थी। क्योंकि जोबनपगी देखता ही नहीं था, सोचता भी नहीं था, जो सामने आता उसको लूट लेता था। भगवान स्वामिनारायण डभाण गाँव में यज्ञ कर रहे थे। इनमें कई राज्यों के बडे बडे ठाकुर अपने अपने शक्तिशाली

और मूल्यवान अश्वों को ले कर आए थे । खुद भगवान श्रीस्वामिनारायण के पास भी एक अति मूल्यवान माणकी घोडी थी । उसकी गति और शक्ति की प्रशंसा सारे राज्य में प्रसिद्ध थी । इस घोडी को चुराने केलिए बहुत दिनों से जोबनपगी मौका देख रहा था । डभाण गाँव के यज्ञ में अश्व की चोरी करने का बड़ा मौका मिल जाएगा, ऐसा सोचकर वह अपने साथियों के साथ डभाण गाँव के पास आकर ठहरा एक दिन मध्य रात्रि को जोबनपगी और इसके साथियों ने अश्वशाला में प्रवेश किया । मगर इन्होंने एक आश्चर्यकारी दृश्य देखा । अश्वशाला में जितने अश्व थे उस हर एक अश्व के पास भगवान श्रीस्वामिनारायण दिखाई दिये । आज हमारा काम नहीं हो सकेगा ऐसा सोचकर वह इस रात वापस चला गया ।

दूसरे दिन मध्य रात्रि को फिर अश्वशाला में प्रवेश किया तब भी वही दृश्य देखा जो गत मध्य रात्रि को देखा था । इस प्रकार तीन दिन तक अश्व चूराने का प्रयत्न करने के बावजूद एक भी अश्व नहीं चूरा सका ।

वास्तव में भगवान श्रीस्वामिनारायण को देखने से इसका स्वभाव ही बदलने लगा । आखिर में इसने सोचा कि कब तक मैं ऐसे पाप कर्म करता रहुँगा ? यह श्रीस्वामिनारायण कोई सामान्य पुरुष नहीं है यह तो महापुरुष है, भगवान है,

ऐसा सोचकर वह भगवान श्रीस्वामिनारायण के पास आया और उन के चरणों में गिर पड़ा और रोने लगा । भगवान श्रीस्वामिनारायण ने उसे उठायै और कहा उठो भक्तराज जोबनपगी ! आज तुमने अपने पुरुषार्थ को सिद्ध कर लिया । तुम परम भगवत हो गए ।

जोबनपगी ने पहले अपनी शक्तियों को लोगों को लूटने में, लोगों की हत्याएँ करने में लगाई थीं, बस, आजसे वही शक्तियाँ सत्य की खोज के लिए परिवर्तित हो गई । जोबनपगी भगवान को उपलब्ध हो गए । और भगवान जोबनपगी को उपलब्ध हो गए ।

:- धार्मिक कार्य :-

भगवान श्रीस्वामिनारायण ने सामाजिक कार्य करके समाज को व्यसनों, विविध वहेमों तथा अनीति एवं दुराचार आदि दुर्गुणों से मुक्त करने के बाद धर्म, ज्ञान, वैराग्य एवं निर्मल शुद्ध भक्ति की ओर पुनः स्थापित करना उन का प्रधान कार्य था । उन्होंने गाँव गाँव में विचरण करते हुए वैराग्यवान मुमुक्षुओं को भागवती दीक्षा देकर बहुत संत बनाए और भागवत धर्म, ज्ञान, वैराग्य, भक्ति आदि के प्रचार के लिए अलग अलग मंडलों की रचना करके स्थान स्थान पर भेजते रहें । सारे संत गाँव व नगरों में जाकर लोगों को धर्मक्षेत्र में

धर्म के नाम से चलरहे ढोंग एवं भक्ति क्षेत्र में भ्रष्टाचार से अवगत कराया और वैदिकधर्म एवं शुद्ध भक्तिमार्ग का ज्ञानोपदेश दिया ।

-: परमहंसवृंद और साहित्य में योगदान :-

भगवान श्रीस्वामिनारायण द्वारा सामाजिक और धार्मिक क्षेत्रों में की गई क्रान्ति एवं अपने प्रभाव से अपने बडे बडे राजाओं, राजपुरुषों, विद्वानों कवियों ने इस पवित्र कार्य में संमिलित होने के लिए राजसम्मान एवं गृहस्थाश्रम के वैभवों के सुखों को छोड़कर भगवान श्रीस्वामिनारायण को अपना जीवन समर्पण किया। आजीवन उनके साथ सामाजिक और धार्मिक कार्यो में लगे रहें ।

भगवान श्रीस्वामिनारायण ने अनेकों को भागवती दीक्षा प्रदान करके संत बनाये। अल्पकाल में ही ऐसे भागवती दीक्षा से दीक्षित परमहंस की संख्या पांच सौ से भी अधिक हो गई। इन परमहंसों ने भगवान श्रीस्वामिनारायण का दिव्य संदेश गाँव व नगरों में जाकर पहुँचाया जिन्हों में मुक्तराज श्रीमुक्तानन्द स्वामी, कविराज श्रीब्रह्मानन्द स्वामी, श्रीदेवानन्द स्वामी, योगीराज श्रीगोपालानन्द स्वामी, वैराग्यमूर्ति श्रीनिष्कुलानन्द स्वामी, श्रीगुणातीतानन्द स्वामी, श्रीशुकानन्द स्वामी, श्रीनित्यानन्द स्वामी, श्रीशतानन्द स्वामी, श्रीवैष्वानन्द

स्वामी, श्रीवासुदेवानन्द ब्रह्मचारी आदि प्रमुख थे। उल में कई बड़े बड़े संस्कृत के विद्वान थें। कई कवि थें। न केवल उनका पांडित्य एवं कवित्व उस काल तक सीमित था, बल्कि आज भी इनके द्वारा रचे गये संप्रदाय के न्यायसंगत ग्रन्थों और कविताओं के द्वारा मालूम होता है कि-समाज में उनकी विद्वत्ता और कवित्व का मूल्यांकन आज भी नहीं किया जा सकता है । भगवान श्रीस्वामिनारायण के उन परमहंसों ने संस्कृत साहित्य और गुजराती काव्य द्वारा गुजराती भाषा को समृद्ध करने में जो महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है, वह आज भी गुतराती साहित्य के इतिहास में दिखाई देता है ।

इस संप्रदाय का इतिहास साक्षी है कि - भगवान श्रीस्वामिनारायण की केवल आज्ञा से संत सुख वैभव छोड़कर स्थान स्थान पर निकल पड़े थे। इन संतो को अनेक प्रकार के कठिन दुःख देने में समाजने कुछ बाकी नहीं रखा था। फिर भी अपनी साधुता को नहीं छोडकर भगवान की आज्ञा से अनेक विध कठिन कसौटी से पार उतरे। समाज को उत्तर देने में समर्थ होते हुए भी अपनी साधुता एवं सहनशीलता को कभी कलंकित नहीं होने दिया। कभी वे कच्चे आटे में सिर्फ पानी मिलाकर भोजन कर लेते थे, तो कभी वर्षाकाल में और सर्दी में भी बाहर ही रहते थे। कभी गाँव एवं नगर के लोग साधुओं को बिनाकारण अपमानित करके बाहर निकाल देते

थे, तो कभी शरीर पर ही पिटाई होती थी। परंतु इन परमहंसों ने जो ब्रह्मरस का पान किया था उसी ब्रह्मरस को लोगों को पिलाने के लिए गाँव गाँव में समाज के बिच घुमते रहें और ब्रह्मरस बाँटते रहें ।

-: भुज में हिंसामय यज्ञ का विरोध :-

नागर ब्राह्मण जगजीवन महेता उस समय कच्छ राज्य के मंत्री पद पर था । वह देवीभक्त और तमोगुणी था । इसलिए वह धार्मिक क्रियाओं और यज्ञों में प्राणीयों का बलिदान देता था। उस समय कच्छ के गाँव और इलाको में खासकर भुज शहर में सत्संगीओं की संख्या बढ़ रही थी । इसलिए भगवान श्रीस्वामिनारायण कच्छ के भक्तों से प्रेमवश होकर बारबार कच्छ में आया करते थे । लोग श्रीहरि को भगवान मानते थें। इस बात से जगजीवन मेहता बहुत नाराज था और भगवान श्रीस्वामिनारायण का विरोध करता था । कई बार उसने भगवान श्रीस्वामिनारायण का अपमान करने का प्रयत्न किया, मगर सफलता नहीं मिली। एक समय उसने भुजशहर में हिंसामय यज्ञ का प्रारंभ किया, तब भगवान श्रीस्वामिनारायण भुजशहर में ही विराजमान थे। उस यज्ञ में उनको आमन्त्रित कर के और यज्ञ में आए हुए विद्वान ब्राह्मणों द्वारा शास्त्रचर्चा करवाकर आमजनता के सामने उन का

अपमान कराऊँ ऐसा सोचकर उसने भगवान श्रीस्वामिनारायण को यज्ञ में आमंत्रित किया । भगवान श्रीस्वामिनारायण यज्ञशाला में गए। वहाँ उन्होंने प्राणियों को देखा, जो बहुत ही भयभीत थे । जगजीवन महेता ने बताया कि यह यज्ञ वेदोक्त विधि से हो रहा है । इसलिए यज्ञ में प्राणी का बलिदान देना आवश्यक है । प्राणियों का बलिदान दिया बिना वैदिक यज्ञ नही हो सकता । क्योंकि वेद ने हिंसामय यज्ञ का ही प्रतिपादन किया है। जगजीवन का वचन सुनते ही भगवान श्रीस्वामिनारायण ने यज्ञशाला में विद्वानों के सामने ही हिंसामय यज्ञ का निषेध करते हुए कहा कि हिंसामय यज्ञ करना वेद विरुद्ध है । माता से भी अधिक दयालु वेदों का तात्पर्य हिंसा करना कभी नहीं है । हिंसामय यज्ञ करना वेद के विरुद्ध है। प्राणियों का वध करना महापाप है। इस प्रकार यदि यज्ञ हिंसामय किया जाय तो इसका परिणाम अच्छा नहीं होगा। वेद साक्षात् स्वयं भगवान है **'यज्ञो वै विष्णुः'** । अतः हिंसामय यज्ञकरनेवाले और करानेवालें दोनों ही भगवान के अपराधी हैं । अतः अपराध का फल भुगतना ही पडेगा । निर्दोष प्राणियों की हिंसा करके अधोगति पाओगे इस प्रकार समझाने पर भी जगजीवन महेता नहीं समझा । भगवान श्रीस्वामिनारायण की और निंदा करने लगा । भगवान श्रीस्वामिनारायण यज्ञ के विषय में वेद का सही तात्पर्य

समझाकर वहाँ से निकल पड़े ।

जगजीवन ने यज्ञ में प्राणियों का वध शुरु किया । उसी समय राजा ने अपने सैन्य को आदेश दिया जाओ ! यज्ञ को छिन्न भिन्न कर दो और जगजीवन और इसके साथियों को मार डालो । इस प्रकार जगजीवन अकाल मारा गया । सारे गुजरात की जनता ने इस हिंसामय यज्ञ का बुरा परिणाम देखा और तबसे सारे राज्य में हिंसामय यज्ञ संपूर्ण बन्द हो गए ।

अहिंसा एवं वैदिक यज्ञों का प्रवर्तन

भगवान श्रीस्वामिनारायण ने भारत भ्रमण के समय सात साल तक सारे भारत देश में भ्रमण करते हुए देखा कि जगह जगह में धर्म के नाम पर एवं यज्ञों के नाम से प्राणीयों की हिंसा हो रही थी । इस भयंकर दृश्यों को देखकर दयामूर्ति भगवान श्रीस्वामिनारायण ने प्राणी हिंसा का प्रबल विरोध किया । उन्होंने स्पष्ट घोषणा की - कि देवी-देवताओं के आगे, यज्ञों में एवं मांस भक्षण के लिए घरों में या बाहर प्राणियों का वध करना महापाप है, एवं वेद के विरुद्ध है । माता से भी अधिक दयालु वेदों का तात्पर्य हिंसामय यज्ञ करना कभी नहीं है । और प्राणीयों का वध करके मांस भक्षण करना मानव समाज की परंपराओं के विरुद्ध है । हरएक प्राणि को जीवीत का अधिकार है । सृष्टिकर्ता भगवान ने

मानव के लिए सात्त्विक बहु विध धान्य एवं फलों पैदा किये हैं । धर्म के नाम पर होनेवाली हिंसा का उन्होंने न केवल मौखिक विरोध किया, बल्कि आदर्श के रूप में अनेक सात्त्विक अहिंसामय यज्ञ भी किए । वेदों का उल्टा अर्थ अनपढ़ लोगों को समझाकर नासमझ लोगों ने भगवान श्रीस्वामिनारायण के साथ वाद विवाद कर के उन्होंको एवं संप्रदाय को भी अवैदिक ठहराने की कोशिश की लेकिन आखिरकर भगवान श्रीस्वामिनारायण की ही विजय हुई । इस प्रकार समाज में हिंसामय यज्ञ द्वारा प्रवर्तित कुरिवाजों को बंध करके **सर्वजीवहितावह** का संदेश दिया ।

जेतलपुर से अहिंसामय यज्ञ का प्रारंभ

भगवान श्रीस्वामिनारायण के पास त्रिकरण सारूप्य रसायण था । अर्थात् मन वाणी और क्रिया में एकता थी । इसलिए उन्होंने न केवल हिंसामय यज्ञ का मौखिक विरोध किया बल्कि आदर्श के रूप में अनेक वैदिक एवं सात्त्विक यज्ञ किए ।

जेतलपुर में उन्होंनें वि. स. १८६४ वैशाख मास में सर्वप्रथम यज्ञ किया जो पूर्णरूप से वैदिक एवं अहिंसामय था । इस यज्ञ में अनेक विद्धान ब्राह्मन आए हुए थें । हजारों की संख्या में भक्त लोग भी आए थें । उन सबको भगवान

श्रीस्वामिनारायण ने वैदिक एवं अहिंसामय यज्ञ का महात्म्य समजाया और उसे इच्छित फलदाई बताया ।

इस प्रकार वैदिक यज्ञ की अहिंसामय शुरुआत हुई । तत्पश्चात् उन्होंने अनेक बड़े बड़े महायज्ञों की परंपरा चलाई, जो आज भी इस संप्रदाय में चली आ रही है ।

-: कुरिवाजों :-

उस समय गुजरात में समाज में दो कुरिवाज थे एक सतीप्रथा और दूसरा बच्ची को जन्म के साथ ही दूधमें डुबोकर बाल हत्या करना ।

-: सती प्रथा :-

प्राचीनकाल में शुद्ध वैदिक धर्म का बहुत प्रभाव था । उस समय पतिव्रता नारियाँ अति समर्थ थीं और पति की ओर परमेश्वर की भक्ति थी । इसलिए पति के मृत्यु के बाद बिना पति जी नहीं सकती थी । अत: पति के मृत्यु के पीछे पतिव्रता धर्म के प्रभाव से स्वयं ही अपने शरीर से अग्नि उत्पन्न करके स्वेच्छा से शरीरदाह करके सती होती थी । मगर अज्ञानी समाज ने इस सतीप्रथा को उल्टा समझ लिया और पति की मृत्यु के पीछे उसकी पत्नी को जबरदस्ती से पति के

साथ चिता में जिन्दा जलाने की प्रथा बना दी गई । समाज में इस तरह की सतीप्रथा के नाम से चलती कुप्रथा को बंद करने के लिए भगवान श्रीस्वामिनारायण ने प्रबल अभियान चलाया और लोगों को समझाकर सतीप्रथा दूर करने मिटाने में उन्होंने महान योगदान दिया ।

-: बालहत्या :-

समाज में और एक कुरिवाज था । खासकर ठाकुर समाज में शादी के समय कन्यादान के साथ बहुत दहेज देना पड़ता था । यदि कन्या के पिता के पास इतना धन-धान्य नहीं हो तो अपना घर-खेत बेचकर भी दहेज पूरा करना पडता था । (आज भी दहेज का रिवाज फिर सिर उठ़ा रहा है) घर में यदि एक कन्या का जन्म हुआ तो मातापिता के पूरे जीवन की कमाई कन्यादान में ही चली जाती थी । इस लिए इसका प्रभाव लडकीयों पर पड़ने लगा । घर में यदि लडकी का जन्म होता था तो उसे जन्म के साथ गरम दूध में डुबा कर मार दी जाती थी । इस प्रकार का कुरिवाज करीब सारे गुजरात प्रदेश में फैला हुआ था । भगवान श्रीस्वामिनारायण गाँव गाँव में घूम कर लोगों को समझाकर इस कुरिवाज को पूर्णत: मिटाने में कामयाब हुए ।

-: वेद का संदेश :-

दुराग्रह के कारण बहुत लम्बे समय से वैष्णवों एवं शैवों का परस्पर युद्ध सा वैमनस्य चला आ रहा था। उस वैमनस्य को मिटाने के लिए भगवान श्रीस्वामिनारायण ने स्पष्ट रूप से समझाया कि-दोनों एक ही तत्त्व है, जो परम सत्य है। वही तत्त्व अनंतरूपी है। अनंत नामी है। वही ही चतुमुर्ख ब्रह्मा के रूप से जगत की उत्पत्ति करते हैं। विष्णु के रूप में पालन करते हैं और शिवरूप से संहार करते हैं। अतः वे अपने ही के कार्य भेद से अलग अलग रूप और नाम से प्रसिद्ध है। किन्तु परमतत्त्व की विष्णुरूप, एवं शिवरूप आदि किसी भी रूप की उपासना करने से परब्रह्म की ही उपासना होती है। विष्णु, नारायण, शिव आदि किसी भी नाम की उपासना होती है। वही वेदों का परम सत्य सिद्धान्त है। भगवान श्रीकृष्ण ने गीता में कहा है-

येऽप्यन्यदेवता भक्ता यजन्ते श्रद्धयान्विताः।
तेऽपि मामेव कौन्तेय यजन्त्यविधिपूर्वकम्॥ (गीता ९.२३)

इसी सिद्धान्त को स्पष्ट रूप से भगवान श्रीस्वामिनारायण ने स्वलिखित शिक्षापत्री में भी कहा है कि-

एकात्म्यमेव विज्ञेयं नारायणमहेशयोः।
उभयोर्ब्रह्मरूपेण वेदेषु प्रतिपादनात्॥ (शिक्षा.श्लोक ४७)

नारायण और शिवजी उन दोनों को एक रूप समझना चाहिए, क्योंकि वेदों ने उन दोनों को ब्रह्मरूप से प्रतिपादित किया है।

इस प्रकार भगवान श्रीस्वामिनारायण ने आमलोगों में भगवान के नाम और रुप से परस्पर दुराग्रह से जो कटुता फैली हुई थी उस कटुता को दूर करने के लिए वेदों का संदेश मौखिक और शास्त्रों द्वारा स्पष्ट रूप से समझाया। ईश्वर बहुरूप होने पर एकेश्वरवाद का प्रतिपादन करके शैवों (शिवभक्तों) एवं वैष्णवों की नासमझी दूर की।

-: धर्म मर्यादा :-

धार्मिक स्थानों और मंदिरों में सत्संग के वक्त स्त्री एवं पुरुष एक साथ बैठते थे। इससे सत्संग क्षेत्रों में भक्ति के नाम पर भ्रष्टाचार फैल गया था। भगवान श्रीस्वामिनारायण ने सत्संग को शुद्ध रूप देने के लिए भगवान के मंदिरों में सत्संगसभा, उपन्यास, उत्सव आदि में सम्मिलित होने वाले स्त्री एवं पुरुष के लिए अलग-अलग मर्यादा निश्चित की। पुरुषों एवं स्त्रीयों के लिए अलग-अलग मंदिरों की स्थापना की, जिससे वे लोग अपनी मर्यादा में रहकर भगवान की उपासना कर सकें। इस से सत्संग का स्वरूप विशेष शुद्ध बना। आज भी इस संप्रदाय में स्त्री एवं पुरुषों के लिए

अलग-अलग मंदिरों की व्यवस्था है। साधुओं को आठ प्रकार के स्त्री संसर्ग को त्यागने का आदेश दिया। वैसे ही साध्वीस्त्रीयों के लिए पुरुष से आठ तरीकोंसे दूर रहनेका नियम बनाया। संप्रदाय के आचार्यों को स्पष्टरूप से आदेश दिया कि - वे पुरुष को ही मंत्र एवं दीक्षा दें, और स्त्रीयों को आचार्यपत्नि मंत्र एवं दीक्षा दें। इस प्रकार भगवान श्रीस्वामिनारायण ने तत्कालिन और भविष्य की स्थिति को देखते हुए भक्तिमार्ग और धार्मिक क्षेत्रों को दूराचार से बचाने लिए इन धर्ममर्यादाओं की स्थापना की जिससे भविष्य में भी धर्म मर्यादा का भंग होने न पाए। आज भी इस संप्रदाय में विशेषरूप से धर्ममर्यादा दिखाई देती है।

-: विशिष्टाद्वैत सिद्धान्त :-

अठ़ारहवीं शताब्दी में भगवान श्रीस्वामिनारायण ने भक्ति आंदोलन के पुनः विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। भगवान श्रीनारायण द्वारा उपदिष्ट, श्रीलक्ष्मी द्वारा प्रवर्तित तथा श्रीनाथमुनि, श्रीयमुनमुनि, श्रीरामानुजाचार्य, श्रीरामानन्द स्वामी प्रभृति आचार्यो द्वारा प्रवर्द्धित विशिष्टाद्वैतमत पूर्णतया लोकानुकूल एवं सूत्रानुकूल है। इस विशिष्टाद्वैतमत को भगवान श्रीस्वामिनारायण ने अपने सिद्धान्त के रूप में स्वीकारते हुए स्वलिखित शित्रापत्री में इस प्रकार बताया है.

मंत विशिष्टाद्वैतं मे गोलोको धाम चेप्सितम्।
तत्र ब्रह्मात्मना कृष्णसेवा मुक्तिश्च गम्यताम्॥

वचानामृतमें अपनी रुचि स्पष्ट करते हुए कहा है कि- **श्रीरामानुजस्वामीने जैसे क्षर अक्षर से पर पुरुषोत्तम भगवान का निरूपण किया है, पुरुषोत्तम भगवान में तो हमें उपासना है, तथा गोपियों के समान पुरुषोत्तम भगवानमें हमे भक्ति है, तथा शुकजी के जैसे तथा जडभरत के जैसा तो हमें वैराग्य है, तथा आत्मनिष्ठा है। इस प्रकार हमारा अभिप्राय और रुचि है।** (वचनामृतम् लोया प्रकरणम् १४) इस प्रकार उपास्य देव की स्पष्टता बताई है।

-: तत्त्वनिर्णय :-

पदार्थो का अस्तित्व स्वीकार करते हुए श्रीरामानुजाचार्य के अनुसार ही भगवान श्रीस्वामिनारायण ने भी तीन ही पदार्थ का अस्तित्व स्वीकार किया हैं। वे हैं चित्-अचित् और ईश्वर। चित् जीव है। अचित्- माया (जगत्) है और ईश्वर जीव और माया का अंतर्यामी है। तीनों नित्य और सविशेष हैं, परंतु चित् और अचित् स्वतः अलग होते हुए भी ईश्वर के अधीन है। इन तीनों का स्वरूप भगवान श्रीस्वामिनारायण ने शिक्षापत्री में बताया है।

-: चित् (जीवात्मा) :-

भगवान श्रीस्वामिनारायण ने जीव को चित् कहा है, और जीवात्मा का स्वरूप शरीर, मन, प्राण, बुद्धि आदि के साथ होते हुए भी विलक्षण पदार्थ कहा है । वह स्वभावतः, अपहतपाप्मा, विजर, विमृत्यु, विशोक, विजिघत्स अपिपास, सत्यकाम और सत्यसंकल्प ये गुणाष्टकविशिष्ट तथा अजड़ होकर आनंदरूप में नित्य, अणु होकर अव्यक्त, अचिंत्य, निरवयव और निर्विकार रूप में ज्ञानाश्रय है। ईश्वर के नियम्य, धार्य और शेषरूप में रहता है । परंतु संसार अवस्था में माया से गुण और स्वभाव आच्छादित हो जाने से विपरीत अवस्था में भाषित होता है । जीव अपने समस्त कार्यों के लिए ईश्वर पर आश्रित है । उन्होंने जीव को ब्रह्म का अंश माना है । एवं जीव और ईश्वर की पृथक् सत्ता को स्वीकार करते हुए उन दोनों के बिच क्रमशः अवस्थाओं से नैकट्य गहन होते हैं ये अवस्थाएँ (नवविध सम्बन्धः) हैं (१) स्वामी सेवक सम्बन्धः (२) रक्ष्य-रक्षक सम्बन्धः (३) पिता-पुत्र सम्बन्धः (४) शेष-शेषी सम्बन्धः (५) भर्तृ-भार्या सम्बन्धः (६) ज्ञातृ-ज्ञेय सम्बन्धः (७) शरीर-शरीरि सम्बन्धः (८) आधार-आधेय सम्बन्धः (९) भोक्तृ-भोग्य सम्बन्धः । साथ ही जीव को अणु कहा है **'एष अणुः आत्मा'** (मुण्डोकोपनिषद्) **'बालाग्र शतभागस्य शतधा**

कल्पितस्य भगो जीवस्य' (श्वेता.उपनिषद्) स्वरूपम् अणुमात्रम् स्यात् । इन श्रुतियों को अनुसरते हुए भगवान श्रीस्वामिनारायण ने शिक्षापत्री में बताया है -

हृत्थोऽणुसूक्ष्मश्चिद्रूपो ज्ञाता व्याप्याखिलां तनुम् ।
ज्ञानशक्त्या स्थितो जीवो ज्ञेयोच्छेद्यादिलक्षणः ॥

इस प्रकार जीवात्मा अणु होते हुए भी दीपप्रभा जैसे व्याप्त है, वैसे ही वह हृदय प्रदेश में रहकर धर्मभूतज्ञान द्वारा सर्वत्र शरीर में समान रूप से व्याप्त होकर शरीर के सब सुख-दुःखों को अनुभव करता है और उसके विपरीत ईश्वर को विभु- यानी व्यापक बताया है । जीव एक अल्पज्ञ और अलग शक्तियुक्त पदार्थ है, जब की ईश्वर सर्वज्ञ और सर्व शक्तिमान है । इस प्रकार जीव का स्वरूप शेषत्वविशिष्ट ज्ञातृत्व है ।

-: अचित् (माया - जगत्-प्रकृति) :-

भगवान श्रीस्वामिनारायण ने माया - अर्थात् जगत को न तो मिथ्या माना है और न ही इसे अनिर्वचनीय और न तो एक तुच्छ पदार्थ । जिसका वर्णन नहीं हो सकता उसे अनिर्वचनीय कहते हैं । अनिर्वतनीय कथन मात्र से जगत मिथ्या नहीं बल्कि विचित्र कहा जाता है । जगत् सत्य है, और भगवान की अद्भुत शक्ति है । और परब्रह्म नित्य होने

से उनकी शक्ति भी नित्य ही होती है। **'त्रिगुणात्मा तमः कृष्णशक्तिर्देहतदीययोः'** (शिक्षापत्री) **'माया वयुनम् ज्ञानम्'**। माया शब्द का ज्ञान वाची कहकर श्रीरामानुजाचार्य ने और भगवान श्रीस्वामिनारायण ने जगत को सूत्रानुकूल सत्य साबित किया है।

-: ईश्वर :-

ईश्वर के सम्बन्ध में श्रीरामानुजाचार्य और भगवान श्रीस्वामिनारायण का मत एक ही है कि - ईश्वर सत्यस्वरूप है। ज्ञैनादि दुणाविशिष्ट भी है, एवं सर्वान्तर्तयामी सर्वकर्मफलप्रदाता है। सत्यरूप संपूर्ण जड़-चेतनात्मक जगत ईश्वर का शरीर है। अतःएव यह ईश्वर का नियाम्य, धार्य, एवं शेष है। ईश्वर इस संपूर्ण जगत की आत्मा है, अतःएव वह संपूर्ण जगत के नियामक धर्ता एवं शेषी है। इसी सिद्धान्त को भगवान श्रीस्वामिनारायण ने शिक्षापत्री में एक श्लोक द्वारा ईश्वर का स्वरूर एवं कार्य कहा है।

हृदये जीववज्जीवे जोऽन्तर्यामितया स्थितः।
ज्ञेयः स्वतंत्र ईशोऽसौ सर्वकर्मफसप्रदः॥ (शिक्षापत्री)

श्रुतियाँ इसी अर्थ का प्रतिपादन करती हैं। **'यस्य पृथिवी शरीरम्। यस्याऽऽपः शरीरम्। यस्याऽग्नि शरीरम्। यस्याऽन्तरिक्षं शरीरम्। यस्य वायुः शरीरम्। यस्य द्यौः**

शरीरम्। यस्याऽऽत्मा शरीरम्। यो मृत्युमन्तरे सञ्चरन्, यस्य मृत्युः शरीरम् यं मृत्युर्नवेद, एष सर्वभूतान्तरात्मऽपहतपाप्मा दिव्यो देव एको नारायणः।' अर्थात् जिस परमात्मा के ये पृथ्वी जल तेज वायु आकाश आत्मादि सब शरीर हैं। **'जगत् सर्वं शरीरम् ते'** - अर्थात् यह संपूर्ण जगत परमात्मा का शरीर है। **'तत् सर्वं वै हरेस्तनुः।'** जो यह जड-चेतनात्मक जगत है, वह संपूर्ण श्रीहरि का तनु (शरीर) है। इस प्रकार श्रुति स्मृति कहते हैं, और ईश्वर, चित् और अचित् का नियमन कर्ता तथा उन्हें कार्य में प्रवृत करने वाला है। सृष्टि और संहार ईश्वर की लीलाएँ हैं।

'लोकवत्तु लीलाकैवल्यम्' (ब्रह्म सूत्रम् २-१ - ३३) **'लीला हरेरिदं सर्वम्'** (विष्णु पुराण) **'बालः क्रीडनकैरिव मोदते भगवान्।'** इस प्रकार भगवान अपनी लीला के लिए जगत की सृष्टि करते हैं। ईश्वर तथा - चित् - अचित् के पारस्परिक सम्बन्ध को स्पष्ट करते हुए बताया कि - ईश्वर तथा चित् अचित् अर्थात् जीव जगत का सम्बन्ध अविनाभाव है। वह पूर्णतया आंतरिक सम्बन्ध है। उन्होंने एक अंश में ईश्वर तथा जीव-जगत के बिच वही सम्बन्ध बताया है जो जीव तथा पञ्चभौतिक शरीर के बिच है। इस प्रकार चित्, अचित् और ईश्वर इन त्रिविध पदार्थो को स्वीकार करते हैं।

इस प्रकार चित् - अचित् विशेषणों से युक्त विशेष्य ईश्वर की एकता स्थापित होती हैं। इसलिए ये **'मतं विशिष्टाद्वैत मे'**। कहलाता है। **'द्वयोर्भाव द्विता। द्वितैव द्वैतम्। न द्वैतम् अद्वैतम्। विशिष्टञ्चेदम् अद्वैतम् विशिष्टाद्वैम्।'** इस प्रकार चेतन- अचेतनात्मक जगत परब्रह्म का शरीर है। जैसे पञ्चभौतिकदेह जीव का शरीर है। विशिष्टाद्वैतमत के आधार पर भक्ति मार्ग में भगवान श्रीस्वामिनारायण ने श्रीरामानुजाचार्य का अनुसरण करते हुए दास्यत्व भावयुक्त विष्णु भक्ति पर बल दिया है।

-: शिक्षापत्री संदेश :-

भगवान श्रीस्वामिनारायण ने सोचा कि मेरे रहते हुए इस संप्रदाय सुव्यवस्थित रूप से और मर्यादा में चलता रहेगा, मगर मेरे अंतर्धान होने के पश्चात् भविष्य में भी इसी रूप में चलता रहे, एवं मेरे अनुयायी सदा के लिए इस लोक में और परलोक में भी सुखी रहे इस हेतु से उन्होंने देश विदेश में बसे अपने भक्तों के लिए **'शिक्षापत्री'** नामक एक अद्‌भुत संदेश लिखा जो उनके जीवन का सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य था। इस शिक्षापत्री नामक संदेश में उन्होंनें सभी सच्छास्त्रों का सार सिर्फ २१२ श्लोकों में ही रख दिया। इस शिक्षापत्री ग्रन्थ की विशेषता तो यह है कि इस छोटे से संदेश में उन्होंने अहिंसा,

सत्य, नीति, सदाचार, लोकव्यवहार, जीवनशैली, राजनीति, संप्रदाय की मर्यादा, स्वसिद्धान्त एवं आध्यात्मिक आदि लौकिक एवं पारलौकिक सुख प्राप्ति के लिए आवश्यक सभी बातों को अति अद्‌भुत ढंग से सुग्रंथित कर दिया है। यही शिक्षापत्री इस संप्रदाय की आचार संहिता मानी जाती है।

-: अंग्रेजों से मिलाप :-

भगवान श्रीस्वामिनारायण के समय में गुजरात राज्य में अंग्रेजों का शासन फैल रहा था। भगवान श्रीस्वामिनारायण के समाजिक एवं धार्मिक कार्य की प्रशंसा सारे गुजरात प्रदेश में हो रही थी। मुंबई के **गवर्नर सर् ज्योन् मालकम** भी श्रीहरि के कार्य की प्रशंसा से बहुत प्रभावित थे, और इन्हें श्रीहरि से मिलने की इच्छा थी। उनका राजकोट में वि. सं. १८८६ फाल्गुन सुद ५ रविवार (दिनांक २६-२-१८३०) के दिन भगवान श्रीस्वामिनारायण के साथ मिलाप हुआ। भगवान श्रीस्वामिनारायण के कार्य की सहराना करते हुए गवर्नर ने कहा कि जो काम राजबल, सैन्यबल होते हुए भी राजा से नहीं हो सका है, जैसे कि राज्यों में चोरों की, लूटेरों की ओर निर्दोष मनुष्यों की हत्या करने वालों की संख्या दिन प्रतिदिन बढ़ रही थी और हाहाकार मचा हुआ था। मानो उनका

आपने परिवर्तन करके सारे राज्य में शांति का माहोल पैदा कर दिया है ।

भगवान श्रीस्वामिनारायण ने गवर्नर को स्वलिखित शिक्षापत्री की भेंट की, और कहा कि यही हमारे अनुयायिओं के लिए सामाजिक और धार्मिक कार्यक्रमों की आचार संहिता है। यह शिक्षापत्री सब को न्याय, नीति एवं धर्म का मार्ग बताती है । जो इन्सान इसका पालन करेगा वो कभी भी अन्याय, अनीति, और अत्याचार नहीं कर सकता ।

गवर्नर ने शिक्षापत्री का प्रेम से स्वीकार किया और अपने हृदय के साथ लगाते हुए भगवान श्रीस्वामिनारायण की अति प्रशंसा करने लगे । हिन्दू धर्म के अनुसारे भगवान (GOD) स्वयं इस लोक में मनुष्य रूप में आते है और लोगों को नीति न्याय एवं धर्म सिखाते हैं। आज मैं आपके कार्य में नीति, एवं धर्म का समन्वय देख रहा हूँ । इसलिए आप साक्षात् भगवान हैं। बाद में गवर्नर ने भगवान श्रीस्वामिनारायण की पूजा करके बहुत मूल्यवान वस्त्र अर्पित किए ।

-: भागवतधर्म का पुनः उत्थान :-

भगवान श्रीस्वामिनारायण के सिद्धान्त के अनुसार वेदों द्वारा प्रतिपादित भागवतधर्म ही आत्यंतिक कल्याण का

साधन है । इस धर्म के चार अंग है, धर्म, ज्ञान, वैराग्य एवं भक्ति। इन चारों में से यदि एक की न्यूनता रही तो भागवतधर्म का सम्यक् विकास नहीं होता। इसलिए उन्होंने भागवतधर्म के इन चारों अंगों का बार-बार समन्वय करना समझाया है । इसका प्रमाण वचनामृत ग्रन्थ में बार-बार मिलता है ।

जिस प्रकार मनुष्यों में या किसी प्राणी में एक अंग की न्यूनता रहने पर पूर्णाङ्गी नहीं कहा जाता, जीवन का पूर्णविकास नहीं कर पाता । वैसे ही धर्म, ज्ञान, वैराग्य एवं भक्ति के बिना भागवतधर्म का पूर्णविकास नहीं हो सकता । इसलिए भगवान श्रीस्वामिनारायण ने इन चारों अंगों का सदा के लिए समन्वय होता रहे इस दृष्टि से सत्संग पर विशेष जोर दिया है । भविष्य में सत्संग का प्रवाह स्थिर रूप से चलता रहे इसलिए उन्होंने संप्रदाय में मुख्य चार परंपराएँ चलाई-

शास्त्रपरंपरा, मंदिरपरंपरा, आचार्यपरंपरा और संतपरंपरा । इन चारों परंपराओं के माध्यम से सत्संग पर इतना जोर दिया कि श्रीस्वामिनारायण संप्रदाय में संप्रदाय शब्द के स्थान पर **सत्संग** शब्द का प्रयोग होने लगा और इस मार्ग पर चलनेवाले **सत्संगी** कहलाने लगे ।

-: साहित्य :-

-: संस्कृत भाषा के ग्रन्थ :-

(१) सत्संगिजीवनम् :-

भगवान श्रीस्वामिनारायण की आज्ञा से इस ग्रन्थ की रचना विद्वद्धर्य श्रीशतानंद स्वामी ने की है। यह ग्रन्थ पाँच प्रकरण में विभक्त है। स्वामी ने इस महान ग्रन्थ में धर्म, ज्ञान, वैराग्य, भक्ति, सत्य, अहिंसा, धार्मिकविधि, चारों वर्ण और चारों आश्रमों के सामान्य और विशेष धर्म का स्पष्टरूप से प्रतिपादन किया है। इसलिए यह ग्रन्थ संप्रदायके दार्शनिक सिद्धान्त एवं धार्मिक मान्यताओं का आधार है। विशेष में यह ग्रन्थ भगवान श्रीस्वामिनारायण के जन्म से अन्तर्धान तक की लीलाओं से परिपूर्ण है।

(२) शिक्षापत्री :-

शिक्षापत्री के रचयिता भगवान श्रीस्वामिनारायण स्वयं हैं सभी सच्छास्त्रों का सार सिर्फ २१२ श्लोकों में रख दिया है। इसलिए यह ग्रन्थ संप्रदाय के दार्शनिक सिद्धान्त एवं धार्मिक मान्यताओं का आधार है। इस शिक्षापत्री ग्रन्थ की विशेषता तो यह है कि इस छोटे से संदेश में उन्होंने अहिंसा, सत्य, नीति, सदाचार लोकव्यवहार, जीवनशैली, राजनीति, संप्रदाय की मर्यादा, स्वसिद्धान्त एवं आध्यात्मिक आदि

लौकिक एवं पारलौकिक सुख प्राप्ति के लिए आवश्यक सभी बातों को अद्भुत ढंग से सुग्रथित कर दिया है। इस छोटे से ग्रन्थ में उन्होंने सर्वजीवहितावह नामक अद्भुत संदेश दिया है। **'मद्रूपमिति मद्वाणी'**। 'यह हमारी वाणी वह हमारा ही स्वरूप है। अत: शिक्षापत्री को हमारा स्वरूप मानकर इसको आदरपूर्वर मानना चाहिए। (शिक्षापत्री २०९) इस प्रकार श्रीहरिने स्वयं कहा है। सं १८८२ महा सुद (वसंत पंचमी) सोमवार के दिन (ई स. १२-२-१८२६) वडताल में श्रीसहजानंद स्वामी ने अपना संदेश इस शिक्षापत्री द्वारा समाजको अर्पित किया।

ग्रन्थ और	रचयिता
शिक्षापत्री।	भगवान श्रीस्वामिनारायण।
सत्संगीजीवनम्।	श्रीशतानन्द स्वामी।
हरिवाक्यसुधासिन्धु:।	श्रीशतानन्द स्वामी।
श्रीहरिदिग्विजय:।	श्रीनित्यानन्द स्वामी।
शिक्षापत्री अर्थ दीपिका।	श्रीशतानन्द स्वामी।
ब्रह्ममीमांसा।	श्रीमुक्तानन्द स्वामी।
दशोपनिषद्भाष्यम्।	श्रीगोपालानन्द स्वामी।
गीताभाष्यम्।	श्रीगोपालानन्द स्वामी।
शांडिल्य सूत्रभाष्यम्।	श्रीनित्यानन्द स्वामी।
सत्संगिभूषणम्।	श्रीवासुदेवानन्द स्वामी।

एवं अनेक ग्रन्थों की रचना इस संप्रदाय में है।

-: गुजराती एवं हिन्दी भाषा में साहित्य :-

वचनामृतम् :-

इस ग्रन्थ में भगवान श्रीस्वामिनारायण के जगह-जगह पर दिए उपदेशों का संकलन है । उसका संकलन भगवान श्रीस्वामिनारायण के ही समकालीन पाँच विद्वान् सद्गुरु श्रीमुक्तानंद स्वामी, सद्गुरु श्रीनित्यानंद स्वामी, सद्गुरु श्रीब्रह्मानंद स्वामी, सद्गुरु श्रीगोपालानंद स्वामी एवं सद्गुरु श्रीशुकानंद स्वामी ने किया है। यह ग्रन्थ तत्त्वज्ञान का सद्भुत और अनुपम भण्डार है । इस ग्रन्थ में बडे-बडे विद्वानों से लेकर अनपढ़ ग्रामीण लोगों के प्रश्नों के उत्तर भगवान श्रीस्वामिनारायण ने वेद, उपनिषद्, आदि पुराण के प्रमाण सहित और सरल भाषा में दिए हैं। इसलिए यह ग्रन्थ संप्रदाय के दार्शनिक सिद्धान्त अवं धार्मिक मान्यताओं का आधार माना जाता है ।

भक्तचिंतामणि, निष्कुलानंदकाव्यम्, मुक्तानंदकाव्यम्, प्रेमानंदकाव्यम्, श्रीहरिचरित्रामृतसागर, आदि अनेक प्रकीर्ण पद्य के भी ग्रंथ हैं ।

-: भगवान श्रीस्वामिनारायण द्वारा प्रतिष्ठापित मुख्य मंदिर तथा देव :-

स्थल	मुख्यदेव	प्रतिष्ठा
अहमदावाद	श्रीनरनारायणदेव	प्रतिष्ठा वि. संवत् १८७८ फाल्गुन शुक्ल ३, सोमवार (ई.स.२४-२-१८२२)
भुज	श्रीनरनारायणदेव	प्रतिष्ठा वि. संवत् १८७९ वैशाख सुद ५, शुक्रवार (ई.स. १५-५-१८२३)
वडताल	श्रीलक्ष्मीनारायणदेव	प्रतिष्ठा वि. संवत् १८८१ कार्तिक सुद १२, गुरुवार (ई.स. ३-११-१८२४)
धोलेरा	श्रीमदनमोहनदेव	प्रतिष्ठा वि. संवत् १८८२ वैशाख सुद १३, शनिवार (ई.स. १९-५-१८२६)
जुनागढ	श्रीराधारमणदेव	प्रतिष्ठा वि. संवत् १८८४ वैशाख वद २, गुरुवार (ई.स. १-५-१८२८)
गढपुर	श्रीगोपीनाथजीदेव	प्रतिष्ठा वि. संवत् १८८५ आषाढ सुद १२, मंगलवार (ई.स. २०-१०-१८२८)

एवं आचार्यों द्वारा प्रतिष्ठापित अन्य कई बड़े-बड़े मंदिरों हैं ।

-: आचार्य स्थापन :-

भगवान श्रीस्वामिनारायण ने गुरु परंपरा के लिए दो स्थानों की रचना की। अहमदावाद और वडताल। वि. संवत् १८८२ कार्तिक वद ३, मंगलवार (इ.स. २८-११-१८२५) के दिन वडताल में अपने दोनों भाईयों के पुत्र श्रीअयोध्याप्रसाद महाराज को अमदावाद की गद्दी पर आचार्य महाराज के रूप में नियुक्त किया। और श्रीरघुवीरजी महाराज को वडताल की गद्दी पर आचार्य महाराज के रूप में नियुक्त किया। आज भी उन दोंनों की आचार्य परंपराएँ चली आ रही हैं।

-: अन्तर्धान :-

भगवान श्रीस्वामिनारायण गढपुर में दादाखाचर के दरबार में नीमवृक्ष के नीचे वेदिका पर विराजमान थें। सामने हजारों साधु और भक्तजन सभा में उपस्थित थें। भगवान श्रीस्वामिनारायण सद्गुरु मुक्तात्मा श्रीमुक्तानंद स्वामी, सद्गुरु योगीराज श्रीगोपालानंद स्वामी आदि महान सद्गुरुओं की ओर दृष्टि करके बोले, स्वामी ! आज हमने आप सबको एक खास बात कहने के लिए बुलवाया है। स्वामी ! हम जिस प्रयोजन से इस संसार (पृथ्वी लोक) में आए हैं, वे सब प्रयोजन अब पूरे हो चूके हैं। वैदिक धर्म का पुनरूत्थान हुआ

है, अधर्म का क्षय हुआ है, भविष्य में भी वैदिक धर्म की रक्षा और साधु पुरुषों का रक्षण और उनके मनोरथपूर्ण होते रहें इस हेतु से मंदिरों की स्थापना की गई हैं। जो बरसों तक चलती रहेंगी और उनके माध्यम से भागवतधर्म का देश-विदेश में प्रचार होता रहेगा।

अब तक संतो और भक्तों की सहायता से पूरे समाज में सुधार आया है। आसुरीशक्तियों का परिवर्तन हुआ है। आज वे लोग भी धर्म, अहिंसा, सत्य नीतिमय जीवन जीने लगें हैं। वैदिकधर्म की सर्वत्र स्थापना हुई है। इसी प्रकार भविष्य में सत्संग में ऐसी पवित्रता और धार्मिकता बनी रहे इस के लिए हमने आचार्यों और आप जैसे महान सद्गुरुओं को इस सत्संग की जिम्मेवारी सौंपकर इस लोक को छोड़कर में स्वधाम जाने के लिए सोच लिया है।

भगवान श्रीस्वामिनारायण की बात सुनते ही सभा में बैठे सब साधु और भक्तलोगों के नेत्रों से आँसु बहने लगे। क्या हमारे जीवनप्राण हमको छोड़ कर स्वधाम चले जाएँगे ? उनके बिना हमारा जीवन ही मिट जायेगा। सारे दरबार में शोक का वातावरण फैल गया, एक सन्नाटा छा गया। दूर-दूर गाँव में बसे हुए भक्तों को इस बात की जानकारी पहुँचते ही सब आपने कार्य छोडकर श्रीजी महाराज के दर्शन के लिए गढपुर की ओर चल पडे।

भगवान श्रीस्वामिनारायण ने सोचा कि यदि भक्तों को ऐसी स्थिति में छोड़कर इस लोक से अन्तर्धान हो जाएँगे तो हमारे बिना हजारों भक्तलोग अपना शरीर भी छोड़ देंगे। इसी सोच से सब को सचेत किया। इन्होंने आचार्य साधु और भक्तों को आश्वासन देते हुए कहा - आप लोग धीरज रखिए। हम अभी इस सत्संग को छोड़कर कहीं नहीं जा रहें हैं। सर्वदा सत्संग में ही रहेंगे और हमारे द्वारा प्रतिष्ठापित श्रीनरनारायणदेव, श्रीलक्ष्मीनारायणदेव, श्रीगोपीनाथजी महाराज आदि की मूर्तिओं में साक्षात् सदा विराजमान रहेंगे। आपकी सभी मनोकामनाएँ हम पूर्ण करते रहेंगे। आप सब एक साथ मिलकर हमारी आज्ञानुसार देश-विदेश में वैदिक धर्म, ज्ञान, वैराग्य युक्त भगवान की भक्ति करते रहें और कराते रहें। जब तक कर्म का संपूर्ण क्षय नहीं होता तबतक जीवात्मा को पंचभौतिक शरीर में रहना ही पडता है। इसलिए हमारे अन्तर्धान के पीछे कोई भी साधु या सत्संगी आपना शरीर छोड़ने का प्रयास न करे। हम आप लोगों से वादा करते हैं कि जो धर्म मर्यादा में रहेंगे उनके अन्त समय हम स्वयं उनको हमारा दिव्य दर्शन देकर हमारे साथ ले जाएँगें। इस वादे को हम जरुर निभाएँगे। इसलिए आप सब धर्ममर्यादा में रहकर भक्तिमय जीवन गुजारें।

इस प्रकार भगवान श्रीस्वामिनारायण ने भागवतधर्म की स्थापना करके अपने अवतार का प्रयोजन पूर्ण किया और गढपुर में अपने संतों एवं भक्तों को अंतिम दिव्य संदेश देकर वि. संवत् १८८६ ज्येष्ठ शुक्ल १० बुधवार (इ.स. १-६-१८३०) के दिन स्वयं अंतर्धान हो गएं। इस प्रकार भगवान श्रीस्वामिनारायण कुल मिलाकर ४९ वर्ष २ मास १ दिन इस लोक में रहे और अनेक जीवों का उद्धार किया और आनेवाली नई पीढ़ी को भी सच्ची राह दिखाई।